दैनिक भास्कर

Date: 15-11-17

एनडीए मंत्रियों पर आचार संहिता लागू क्यों नहीं?

शशि थरूर,विदेशमामलों की संसदीय समिति के चेयरमैन और पूर्व केंद्रीय मंत्री (ये लेखक के अपने विचार हैं)

जब मुझेअप्रैल 2009 में लोकसभा के लिए चुने जाने के बाद यूपीए सरकार में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया था तो मैं संयुक्त राष्ट्र के लंबे कॅरिअर से वहां नहीं रहा था। बल्कि निजी जीवन के अल्पकाल के बाद सार्वजनिक क्षेत्र में आया था और उस थोड़े से समय में मैंने कई संस्थाओं में सलाहकार की भूमिका निभाई थी। मैंने विदेश मंत्रालय में राज्यमंत्री का दायित्व संभाला भी नहीं था कि प्रधानमंत्री कार्यालय से अनुरोध आया कि मैं अपने उक्त सारे दायित्वों संबंधों की जानकारी दूं।मैंने एक मेमो में उन्हें व्यवस्थित रूप से सूचीबद्ध कर कैबिनेट सचिव को भेज दिया। कुल नौ पद थे, ज्यादातर मेरे पूर्ववर्ती अंतरराष्ट्रीय जीवन की विरासत थे। इनमें मेरे अंतिम शिक्षण संस्थान फ्लेचर स्कूल ऑफ लॉ एंड डिप्लोमेसी के बोर्ड ऑफ ट्रस्टीज, रेडक्रास की अंतरराष्ट्रीय समिति में मानद सलाहकार, फेलो, न्यूयॉर्क इंस्टीट्यूट ऑफ ह्यूमेनिटीज और दुबई स्थित इंडियन स्कूल का पैट्रन शामिल थे। कुछ ही दिनों में कैबिनेट सचिव केएम चंद्रशेखर ने कहा कि मुझे सारे पदों से इस्तीफा देना होगा। चूंकि इन सारे प्रतिष्ठित संस्थानों में मैं बिना मानदेय वाले मानद पदों पर था और उनकी गतिविधियां सिद्धांत भारत सरकार के अनुरूप थे तो मैंने जिज्ञासा जाहिर की। कैबिनेट सचिव ने एक दस्तावेज भेजा। यह मंत्रिपरिषद के लिए आचार संहिता थी, जिसे दशकों पहले अपनाया गया था- मुझे लगता है 1950 पार के दशक में- और हाल में इसे 1970 के दशक में फिर जारी किया गया था। इस संहिता के तहत मंत्रियों को सिर्फ उनकी सारी बिज़नेस गतिविधियां छोड़नी होती है (यदि कोई हो तो) बल्कि चैरिटेबल सहित अन्य सारे संस्थानों से संबंध भी खत्म करना होते हैं।

मैंने बिना किसी आपत्ति के उसे स्वीकार किया पर जिस तरह से संहिता की व्याख्या की गई थी उस पर स्पष्टीकरण मांगा। कैबिनेट सचिव ने स्पष्ट कहा : केवल किसी तरह का संबंध होने के कारण सरकार के किसी मंत्री को किसी संस्था की गतिविधियों से जोड़े जाने का जोखिम नहीं लेना चाहिए। यह सामाजिक उद्देश्य से काम करने वाली संस्थाओं पर लागू भी होता है, जिनसे सरकार को कोई समस्या नहीं होती। सही भी है कि यदि एक स्कूल का संरक्षक बना तो अन्य स्कूलों से तुलना में पक्षपात का मामला बन सकता है।

उन्होंने ध्यान दिलाया कि मानद पद भी हो तो संभव है वे काम के लिए चंदा एकत्रित करते हों और मास्टहेड पर मंत्री के नाम का दुरुपयोग संभव है। मसलन, मंत्री वाली संस्था को दान देने के पीछे मंत्री से बदले में कुछ पाने की अपेक्षा हो सकती है। मंत्री इससे इनकार भी कर दें तो भी सिर्फ पद होना ही नुकसान पहुंचाने वाला हो सकता है। उन्होंने कहा कि मंत्रिपरिषद के सदस्य को हितों के टकराव के संदेह से ऊपर होना चाहिए, फिर चाहे वह कितना ही मामूली क्यों हो। संहिता के मुख्य प्रावधान अनुच्छेद 3.1 में हैं, जिसमें मंत्री को व्यक्तिगत या परिवार के सदस्य के माध्यम से किसी भी उद्देश्य के लिए चंदा स्वीकार करने से रोका गया है। हालांकि एक खामी है : मंत्री किसी रजिस्टर्ड सोसायटी या चैरिटेबल संस्था अथवा सरकारी मान्यता प्राप्त संस्था के ऐसे प्रयासों का हिस्सा बन सकता है, जिसे प्रधानमंत्री ने अपवादस्वरूप मंजूरी दी हो। मैंने इसकी मांग नहीं की। साफ था कि डॉ. मनमोहन सिंह के मातहत कैबिनेट सचिव नियमों का कड़ाई से पालन करने वाले थे। मैंने सारी संस्थाओं के सारे पदों से इस्तीफे दे दिए।इसीलिए इंडिया फाउंडेशन के बोर्ड पर चार मंत्रियों (निर्मला सीतारमन, सुरेश प्रभु, जयंत सिन्हा और एमजे अकबर) के होने से पैदा विवाद पर मेरी जिज्ञासा जागृत हुई। इस संस्था से सत्तारूढ़ दल के कई दिग्गज जुड़े हैं। मेरी तरह ही फाउंडेशन प्रमुख शौर्य डोभाल ने ध्यान दिलाया कि ये लोग मंत्री बनने के पहले से उससे जुड़े हैं लेकिन, उन्हें मेरी तरह त्यागपत्र देने के लिए नहीं कहा गया। मैं इस स्थिति में नहीं हूं

कि कैबिनेट सचिव पर सवाल करूं लेकिन, बुनियादी सवाल उठते हैं : क्या प्रधानमंत्री ने इंडिया फाउंडेशन पर बने रहने के लिए मंत्रियों को आचार संहिता से मुक्त रहने के अपवाद को मंजूरी दी है? क्या इसकी खासतौर पर मांग की गई थी और कैबिनेट सचिव के माध्यम से इसकी मंजूरी ली गई? यदि ऐसा नहीं हुआ है तो क्या सरकार ने अपनी ही आचार संहित को त्याग दिया है और किस अधिकार से?हितों के टकराव का मुद्दा एकदम सरल है। इसकी शास्त्रीय परिभाषा यह है: हितों का टकराव ऐसी परिस्थितियों से पैदा होता है, जो यह जोखिम निर्मित करती हैं कि प्राथमिक हित के बारे में पेशेवर फैसले अथवा कार्रवाई गैर-वाजिब ढंग से द्वितीयक हित द्वारा प्रभावित हो।' बेशक, किसी भी मंत्री का प्राथमिक हित तो मंत्री के रूप में उसकी जवाबदारियां हैं। संबंधित मंत्री कह सकते हैं कि इंडिया फाउंडेशन के काम में ऐसा कुछ नहीं है, जिससे मंत्री के रूप में उनका पेशवर काम प्रभावित हो। लेकिन, मंत्री के होने से फाउंडेशन से पड़ने वाले प्रभाव का क्या?

जब फाउंडेशन फंड इकट्ठा करता होगा तो मास्टहेड पर मंत्रियों के नाम होने से दानदाता उससे ज्यादा प्रतिसाद नहीं देंगे, जो वे किसी अन्य फाउंडेशन को देते? जब वे विदेशी मान्यवरों को आमंत्रित करते होंगे तो क्या यह संभव नहीं है कि मंत्रियों की निकटता पाने की संभावना के कारण वे आमंत्रण स्वीकार करते होंगे? क्या उन मंत्रियों के जुड़े होने के कारण इस तरह फायदा लेना फाउंडेशन के लिए नैतिक रूप से उचित है, जिन्हें भारतीय करदाता वेतन देते हैं? डॉ. मनमोहन सिंह और उनके कैबिनेट सचिव के पास एक तरह का उत्तर था और ऐसा प्रतीत होता है कि मोदी और प्रधानमंत्री कार्यालय के पास दूसरे तरह का उत्तर है।एक ऐसे देश में जहां हम पर करोड़ों के घोटालों का मुद्दा हावी रहता है, इस तरह के नैतिकता के विवाद दुर्लभ ही हैं। लेकिन, ऐसी राजनीतिक व्यवस्था में जहां मानकों को कायम रखने की शिद्दत से जरूरत हो तो इस मुद्दे का सामना करना ही ठीक होगा। मंत्रियों की आचार संहिता को बदला नहीं गया है; यह अब भी गृह मंत्रालय की वेबसाइट पर है। फिर क्या इसे लागू नहीं किया जाना चाहिए?

नईदुनिया

Date: 15-11-17

पूर्वी एशिया में नए रिश्तों की बुनियाद

डॉ. रहीस सिंह(लेखक विदेशी मामलों के जानकार हैं)

हवाई से टोक्यो, सियोल और हनोई होते हुए अमेरिकी राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप मनीला पहुंचे और भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी नई दिल्ली से, तो वहां न केवल द्विपक्षीय रिश्तों की नई बुनियाद रखी गई, बल्कि बहुपक्षीय रणनीति के नए आयाम भी निर्मित होते दिखे। यहां पर एशिया-प्रशांत आर्थिक सहयोग (एपेक), आसियान और पूर्वी एशिया के देशों की बैठक के साथ-साथ भारत-अमेरिका, भारत-जापान और हिंद-प्रशांत क्षेत्र के रणनीतिक चतुर्भुज देशों (भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया) के बीच हुई बैठकों में कुछ अहम विषय निकलकर सामने आए, जो वैश्विक संबंधों की पुनर्रचना का संकेत देते हैं। यद्यपि इन बैठकों में आर्थिक हित भी चर्चा का विषय रहे, लेकिन सही अर्थों में सामरिक विषय और एशिया-प्रशांत क्षेत्र में भावी रणनीतिक तैयारियां ही इनके केंद्र में थीं। मनीला में इन वैश्विक नेताओं का मिलना न केवल अमेरिकी राष्ट्रपति ट्रंप, बल्कि भारत के प्रधानमंत्री सहित जापान एवं ऑस्ट्रेलिया के प्रधानमंत्रियों की चतुराइयों से भरपूर कूटनीतिक यात्रा का अहम पड़ाव भी था, जो चीन को रोकने या फिर नई वैश्विक कूटनीतिके विकल्प तैयार करने की कवायद कर रहे थे।

खास बात यह रही कि यात्रा के अंतिम पड़ाव तक पहुंचते-पहुंचते ट्रंप का मुख्य फोकस भारत और भारत के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी की ओर खिसक गया, जबकि उनके प्रशांत महासागरीय दोस्त भारत के बाद दूसरे एवं तीसरे पायदान पर पहुंच गए। क्या ऐसा ट्रंप का भारत में बढ़ते विश्वास के कारण हुआ या फिर उनकी महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति में भारत की उपयोगिता के कारण?प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने ट्रंप से मुलाकात के बाद कहा कि भारत और अमेरिका के रिश्ते द्विपक्षीय संबंधों से आगे जा सकते हैं और दोनों देश एशिया के भविष्य के लिए मिलकर काम कर सकते हैं। उन्होंने ट्रंप को आश्वस्त किया कि अमेरिका और दुनिया को भारत से जो भी अपेक्षाएं हैं, वह उन पर खरा उतरने की कोशिश करेगा। इसमें कोई संशय नहीं कि आज भारत ऐसी क्षमताएंं हासिल कर चुका है कि दुनिया की अपेक्षाओं पर खरा उतर सके।

लेकिन यहां पर अहम सवाल यह है कि अमेरिका की अपेक्षाएं क्या हैं? क्या ट्रंप से यह उम्मीद की जा सकती है कि वे दुनिया या खासकर एशियाई क्षेत्र में शांति की कोई ठोस बुनियाद रखने हेतु योजना तैयार कर रहे हैं? या फिर अमेरिका प्रशांत महासागर में स्थापित रही अपनी सर्वोच्चता को बचाने की रणनीति बना रहा है, जिसे चीन लगातार नुकसान पहुंचा रहा है? चूंकि चीन भारत के लिए भी खतरा है, इसलिए भारत अमेरिका के साथ मिलकर चीन को घेरने के लिए भावी रणनीति तैयार कर सकता है और करना भी चाहिए। लेकिन बेहतर होगा कि भारत अकेले अमेरिका पर भरोसा करने और उसके साथ रणनीति बनाने के बजाय भारत-जापान-अमेरिका त्रिकोण अथवा भारत-जापान-ऑस्ट्रेलिया -अमेरिका चतुर्भुज को व्यावहारिक स्वरूप देने की रणनीति पर आगे बढ़े। अगर भारत अमेरिका के साथ एक निर्णायक साझेदारी करना चाहता है तो इस विषय पर गंभीरता से विचार करना होगा कि डोनाल्ड ट्रंप की एशिया नीति है क्या? वे बराक ओबामा की 'एशिया धुरी नीति पर चलेंगे अथवा किसी अन्य वैकल्पिक नीति पर? अभी तक यह सुनिश्चित नहीं हो पाया है कि डोनाल्ड ट्रंप की विदेश नीति 'एशिया धुरी पर आधारित होगी या 'मॉस्को धुरी पर अथवा 'बीजिंग धुरी पर? ध्यान रहे कि ट्रंप एक व्यवसायी रहे हैं, इसलिए वे व्यापारिक रिश्तों पर विशेष ध्यान देते हुए बीजिंग के करीब भी जा सकते हैं। ऐसे में उत्तर कोरिया की हिमाकतों से सशंकित दक्षिण कोरिया और जापान भले ही उन पर भरोसा कर लें, लेकिन वियतनाम व फिलीपींस सहित पूर्वी एशिया के देश उन पर भरोसा करेंगे, कहना कठिन है। ऐसे में क्या भारत के लिए ट्रंप पर आंख मूंदकरभरोसा करना उचित होगा?

ध्यान रहे कि जापान के लिए रवाना होने से पहले ट्रंप पर्ल हार्बर गए थे, जहां उन्होंने यूएस एशिया पेसिफिक कमांड जाकर यूएसएस एरीजोना के शहीद जवानों को श्रद्धांजलि अर्पित की। इसके पश्चात उनका एशियाई यात्रा पर रवाना होना तथा जापान पहुंचकर योकोता एयरबेस पर सैन्यकर्मियों को संबोधित करते हुए यह कहना कि किसी भी तानाशाह, सरकार या देश को अमेरिका को कम करके नहीं आंकना चाहिए, यह बताता है कि ट्रंप 'अमेरिका फर्स्ट की बजाए 'अमेरिका सर्वशक्तिमान का संदेश देना चाहते हैं। यहां पर ट्रंप ने यह भी संकेत दिया कि वे उत्तर कोरिया को घेरने के लिए व्लादिमीर पुतिन से भी बात कर सकते हैं। अब यह समझने की जरूरत है कि ट्रंप ने अपनी पांच राष्ट्रों की यात्रा के दौरान दो उन राष्ट्रों में भी शिरकत की, जिनका चीन से दक्षिण चीन सागर को लेकर तीव्र विवाद है। इन दो में से एक, फिलीपींस के कारण तो चीन इंटरनेशनल कोर्ट ऑफ आर्बिट्रेशन में मुंह की खा चुका है। शेष दो राष्ट्र जापान एवं दक्षिण कोरिया वे हैं,

जिनका उत्तर कोरिया से सीधा टकराव है, लेकिन आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा चीन से भी है। चीन का उद्देश्य प्रशांत महासागर में अपनी शक्ति को स्थापित करना ही नहीं, बल्कि उसे बनाए रखना भी है और इसके लिए उसे उत्तर कोरिया की जरूरत है। इसलिए चीन कदापि यह नहीं चाहेगा कि अमेरिका उत्तर कोरिया के खिलाफ उसी तरह की कार्रवाई करे, जैसी उसने अफगानिस्तान में या इराक के खिलाफ की थी। अमेरिका को दक्षिण एशिया और ट्रांस पेसिफिक देशों को साधने के लिए भारत के सहयोग की जरूरत है। ऐसा संदेश पहले ही अमेरिकी रक्षा मंत्री जेम्स मैटिस और विदेश मंत्री रेक्स टिलरसन दिल्ली आकर दे चुके हैं। यानी अमेरिका भारत को आगे करके अन्य सहयोगियों के जरिए अपना वर्चस्व कायम रखना चाह रहा है। जापान एवं दक्षिण कोरिया सुरक्षा चाहते हैं और अन्य एशियाई देश शांतिपूर्ण विकास। चीन ट्रांस-पेसिफिक में एकाधिकार चाहता है। ऐसे में तो यही लगता है कि एशिया-प्रशांत नए रणनीतिक गेम का क्षेत्र बनने जा रहा है।बहरहाल, उक्त स्थितियां बताती हैं कि भारत-अमेरिका गठजोड़ से कहीं अधिक महत्वपूर्ण है भारत-जापान और इससे भी महत्वपूर्ण है भारत-आसियान साझेदारी। संभवत: इसे देखते हुए प्रधानमंत्री मोदी ने इस यात्रा के दौरान शिंजो आबे के साथ द्विपक्षीय

वार्ता कर विशेष रणनीतिक और वैश्विक साझेदारी सुदृढ़ करने की रणनीति को आगे बढ़ाया। इस मुलाकात से दो दिन पूर्व भारत, अमेरिका, जापान और ऑस्ट्रेलिया के अधिकारियों ने हिंद-प्रशांत क्षेत्र को मुक्त और स्वतंत्र बनाए रखने के लिए भारत-जापान-ऑस्ट्रेलिया-अमेरिका चतुर्भुज योजना को मूर्तरूप देने की दिशा में अहम कदम बढ़ाया। इसके साथ ही प्रधानमंत्री ने आगामी गणतंत्र दिवस पर इसराइल के प्रधानमंत्री के साथ-साथ आसियान देशों के प्रमुखों को निमंत्रण देकर भारत की एशिया कूटनीति को केंद्र में लाने तथा एशिया के दो हिस्सों के बीच भारत को एक मजबूत सेतु बनाने की पहल की है। उम्मीद करें कि ये तमाम पहल आर्थिक और सामरिक लिहाज से न सिर्फ भारत, बल्कि एशिया के लिए भी लाभप्रद सिद्ध होंगी।

दैनिक जागरण

Date: 15-11-17

विकल्प के आभाव में जल रही परली

कैप्टन अमरिंदर सिंह,[लेखक पंजाब के मुख्यमंत्री हैं]

इन दिनों उत्तर भारत के कुछ इलाकों में पसरा खतरनाक स्मॉग ही चर्चा के केंद्र में है। सियासी घमासान में किसानों द्वारा पराली (फसल का अवशेष) जलाने का मुद्दा भी छाया हुआ है, मगर अफसोस कि इस पर हंगामे और तल्ख बयानबाजी के बीच इससे जुड़े असल मुद्दों की अनदेखी की जा रही है। स्मॉग की वजह से बदतर होते हालात के लिए पराली जलाने को ही कसूरवार भले ही ठहराया जा रहा हो, लेकिन कोई इस पर बात करने के लिए भी तैयार नहीं कि असल में यह समस्या क्या है और कैसे इसका कारगर समाधान निकाला जाए? मैं बार-बार दोहरा रहा हूं कि यह मसला केवल पराली जलाने या ऐसा करने पर किसानों को सजा देने तक ही नहीं सिमटा हुआ है। यह तो समस्या का सरलीकरण करना ही हुआ। वास्तव में यह बहुत ही व्यापक मुद्दा है जिसके आर्थिक एवं सामाजिक पहलुओं के समग्र संदर्भ को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। यह ऐसा मसला है जिसकी परिधि केवल न्यायिक सीमा तक ही नहीं है, बल्कि इसके सामाजिक और आर्थिक पहलू भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। इससे जुड़े कानूनी समाधान में मीनमेख निकालने की मेरी कोई मंशा नहीं है। अगर स्थिति नियंत्रण से बाहर हो जाए तो न्यायिक तंत्र को सक्रिय होना ही पड़ेगा। हमने भी पंजाब में पराली जलाने के कई मामलों में कार्रवाई की है। यहां तक कि मुझे अपनी भावनाओं के खिलाफ जाकर यह कदम उठाना पड़ा, क्योंकि मैं उन किसानों को कभी दंडित नहीं करना चाहता जो पहले से ही कर्ज के बोझ तले कराहते हुए अपने अस्तित्व के संकट से जूझ रहे हैं। लिहाजा मेरा यही मानना है कि जब हम सभी उपलब्ध विकल्प आजमाकर भी सफल न हो पाएं तभी अंतिम समाधान के तौर न्यायिक विकल्प का सहारा लिया जाना चाहिए। क्या हमने अभी तक अन्य सभी विकल्प आजमा लिए? क्या हमने किसानों को कारगर विकल्प सुझाए जिन्हें अपनाने में वे नाकाम रहे कि अब उन्हें दंडित करना आवश्यक है?

अफसोस कि इन सभी सवालों का जवाब है-नहीं। चूंकि समस्या के दीर्घकालिक समाधान के लिए किसी भी सार्थक पहल पर कोई चर्चा ही नहीं हुई इसलिए समस्या साल दर साल और विकराल होती जा रही है। अभी बस यही हो रहा है कि किसानों को ही कसूरवार मानकर उन पर सख्त नियंत्रण और निगरानी की मांग हो रही है। पराली जलाने के लिए जिम्मेदार कारणों पर विचार न करने के साथ लोग यह भी नहीं सोचते कि किसी व्यावहारिक विकल्प के अभाव में यह किसानों की आजीविका से जुड़ा मसला है।अन्य कृषि प्रधान राज्यों की तरह पंजाब के लिए भी किसानों की आत्महत्या एक गंभीर और संवेदनशील मुद्दा रहा है। ऐसे में और परेशानियां बढ़ने से किसानों की स्थिति बद से बदतर होती जाएगी। इन हालात में पंजाब का रुख यही है कि सरकार पराली जलाए जाने की निरंतर निगरानी करेगी, लेकिन उन लोगों को संतुष्ट करने के लिए किसानों को पकड़कर जेल में नहीं डालेगी जो पर्यावरण के खराब हालात के लिए केवल पंजाब के किसानों को जिम्मेदार मानते हैं। मैं यह भी स्पष्ट कर दूं कि पराली जलाने के दुष्प्रभावों पर किसानों को जागरूक करने का अभियान

निरंतर जारी रहेगा। इसके साथ ही हम इस समस्या के दीर्घकालिक समाधान के लिए सभी विकल्पों पर विचार भी कर रहे हैं। विशेषज्ञों ने एक विकल्प तो यह सुझाया है कि पराली को इकट्ठा कर एक ऐसे स्थान पर पहुंचाया जाए जहां उसका कोई उचित निपटान संभव हो सके।

अगर यह विचार फलीभूत हो जाए तो नि:संदेह बहुत ही बढ़िया है, लेकिन अफसोस कि हमारे पास अभी ऐसी मशीनें नहीं हैं जो महज 15 दिनों के भीतर इस काम को अंजाम दे सकें, क्योंकि धान की कटाई और गेहूं की बुआई के बीच किसानों को जमीन तैयार करने के लिए बमुश्किल 15 दिनों का ही वक्त मिलता है। अगर पराली के निपटान के लिए कोई तकनीक उपलब्ध हो भी तब भी उसकी ऊंची लागत को देखते हुए उसे अमल में लाना अव्यावहारिक है।पंजाब में करीब दो करोड़ टन धान की पराली निकलती है। इसके फसल अवशेष को ठिकाने लगाने के लिए 2,000 करोड़ रुपये से अधिक रकम की दरकार होगी और हमारा सरकारी खजाना खाली पड़ा है और राज्य कर्ज के बोझ तले दबा है।ऐसे में निजी तौर पर मैं केंद्र सरकार से वित्तीय सहायता के लिए कोशिश कर रहा हूं ताकि वैकल्पिक उपायों के माध्यम से किसानों को मुआवजा दिया जा सके।मैं यह भी चाहता हूं कि प्रभावित राज्यों के मुख्यमंत्री भी इसके लिए केंद्र पर दबाव बनाएं। वे सिर्फ पंजाब के सिर पर दोष न मढ़ें जो खुद इस जहरीले स्मॉग के दुष्प्रभावों से उतनी ही बुरी तरह प्रभावित है। यह वक्त एक दूसरे पर ठीकरा फोड़ने का नहीं, बल्कि समग्र्र प्रयासों से केंद्र पर हस्तक्षेप के लिए दबाव बनाने के लिए साझा प्रयास करने का है, लेकिन दुर्भाग्य से अभी दोषारोपण का ही काम हो रहा है। हमने केंद्र के समक्ष लगातार इस मुद्दे को उठाया है और जुलाई में एक व्यापक कार्ययोजना रपट भी सौंपी।

पराली के उचित प्रबंधन के लिए हमने धान के न्यूनतम समर्थन मूल्य यानी एमएसपी पर 100 रुपये प्रति क्विंटल के अतिरिक्त बोनस की मांग की। कई बार प्रधानमंत्री को पत्र लिखा। मुझे विश्वास है कि राष्ट्रीय हित को देखते हुए इस संकट का समाधान तलाशने की खातिर केंद्र सरकार किसी न किसी वित्तीय पैकेज पर जरूर विचार करेगी।पंजाब में विभिन्न स्तरों पर तमाम शोध परियोजनाओं में भी पराली जलाने से होने वाले प्रदूषण को रोकने की दिशा में किफायती एवं कारगर विकल्प तलाशने पर काम चल रहा है। हमारी सरकार किसानों के लिए फसल विविधीकरण पर भी जोर दे रही है ताकि वे कमाई के लिए केवल गेहूं और धान की फसलों पर ही निर्भर न रहें। मेरे ख्याल से फसल विविधीकरण किसानों की तमाम समस्याओं का उचित निदान है, क्योंकि इससे उन्हें बेहतर आमदनी हासिल हो सकती है जो उन्हें कर्ज के दुष्चक्र से बाहर निकालने में मददगार होगी। अभी अधिकांश किसान उसमें ही फंसे हुए हैं।

यह हमारी ऐसी ही तमाम कोशिशों का सुफल है कि पराली जलाने के मामलों में कमी आई है और जैसे-जैसे हमारी वित्तीय स्थिति और बेहतर होगी हम प्रभावी तरीके से ऐसे और भी उपाय जारी रखेंगे। हम इसके लिए तात्कालिक समाधान नहीं तलाश रहे हैं जिसकी फिराक में कुछ दूसरे राज्य नजर आ रहे हैं। हम चाहते हैं कि राष्ट्रीय हित में इसका स्थाई और दीर्घकालीन समाधान निकले। सच कहूं तो निगरानी-नियंत्रण की नहीं, बल्कि सार्थक और प्रभावी नीतिगत पहल की दरकार है। जहां तक इस मामले में फौरी राहत का सवाल है तो यह केवल केंद्र सरकार के दखल से ही मुमकिन है। हमारा संघीय ढांचा भी यही कहता है कि राज्यों की मदद केंद्र सरकार की संवैधानिक बाध्यता है। विशेषकर ऐसे मामले में तो वह राज्यों का मसला बताकर अपना पल्ला नहीं झाड़ सकता जब उत्तर भारत का बड़ा हिस्सा प्रदूषण की चपेट में है और उसका दुष्प्रभाव देश की सीमाओं को भी पार कर सकता है।

जनसत्ता

Date: 14-11-17

मनीला की राह

संपादकीय

इस बार के आसियान सम्मेलन और ईस्ट एशिया शिखर सम्मेलन दो वजहों से खास अहमियत रखते हैं। एक इसलिए कि भारत-आसियान संबंधों के इतिहास में यह एक विशेष अवसर है। दूसरे, इस मौके पर न सिर्फ भारत-आसियान संबंध और पुख्ता हुए बल्कि कूटनीतिक रूप से एक नए व शक्तिशाली समूह के भी आकार लेने के संकेत मिले। जहां तक भारत और आसियान के रिश्तों का सवाल है, इसकी शुरुआत 1992 में हुई और इस घटना का गहरा ताल्लुक भारत में उदारीकरण का दौर शुरू होने से था। भारत ने विदेश व्यापार बढ़ाने और नए निवेश की तलाश में दक्षिण-पूर्व एशिया में भी संभावनाएं टटोलनी शुरू कीं। लुक ईस्ट पॉलिसी या पूरब की ओर देखो के नाम से जो घोषणा की गई उसके पीछे यही ललक थी। 1992 में आसियान से संवाद का विधिवत आरंभ हुआ। वर्ष 2002 में आसियान के साथ भारत का शिखर भागीदारी का रिश्ता बना, और इसके दस साल बाद, 2012 में यह रिश्ता रणनीतिक संबंध के स्तर पर भी पहुंच गया। इस तरह, यह अवसर जहां आसियान-भारत के रिश्तों के पच्चीस वर्ष, भारत की शिखर भागीदारी के पंद्रह वर्ष और दोनों के रणनीतिक संबंध के पांच वर्ष पूरे होने का है, वहीं एक बहुत महत्त्वपूर्ण नई पहल का गवाह भी।

ईस्ट एशिया शिखर सम्मेलन के दौरान ही भारत, जापान, अमेरिका और आस्ट्रेलिया ने एक नए समूह का गठन किया है, जिसे भागीदारों की संख्या के अनुरूप 'क्वाड' नाम दिया गया है। आसियान के इकतीसवें और पूर्वी एशिया के बारहवें शिखर सम्मेलन के दौरान प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी ने जहां अमेरिका के राष्ट्रपति डोनाल्ड ट्रंप, जापान के प्रधानमंत्री शिंजो आबे और आस्ट्रेलियाई प्रधानमंत्री मैल्कॉम टर्नबुल के साथ रणनीतिक मुद्दों पर बातचीत की, वहीं इन देशों के बीच अधिकारी-स्तर की औपचारिक बैठक भी हुई। 'क्वाड' को चीन की चुनौती से निपटने या उसे चुनौती देने की कवायद के तौर पर देखा जा रहा है। भारत और चीन के बीच, व्यापार काफी बढ़ने के बावजूद, दशकों से अविश्वास तो बना ही रहा है, कुछ महीने पहले डोकलाम-गतिरोध के कारण यह तीखी तकरार के स्तर पर पहुंच गया था। अमेरिका और चीन एक दूसरे को मुश्किल प्रतिद्वंद्वी की तरह देखते हैं, जिनके बीच कारोबारी बातें भी होती हैं, पर एक दूसरे को घेरने की कोशिश भी चलती रहती है। चीन और जापान के रिश्ते तो खटास भरे हो ही चुके हैं। ऐसे में क्वाड यानी चतुष्टय का गठन काफी मायने रखता है। यों भारतीय विदेश मंत्रालय ने एक बयान जारी करके कहा है कि चार देशों का यह समूह क्षेत्र में शांति-स्थायित्व और समृद्धि को बढ़ावा देने के लिए एक-दूसरे से संबद्ध दृष्टिकोण और मूल्यों को लेकर चलेगा; इस समूह को किसी अन्य देश के खिलाफ नहीं माना जाना चाहिए।

लेकिन इस स्पष्टीकरण के बावजूद चीन की परेशानी का अंदाजा लगाया जा सकता है। उसने सावधानी-भरी प्रतिक्रिया में कहा है कि उम्मीद है ये चारों देश किसी तीसरे पक्ष को नुकसान नहीं पहुंचाएंगे। लेकिन क्वाड की पहली ही बैठक के एजेंडे में कई बातें ऐसी थीं जो चीन के माथे पर चिंता की लकीरें खींचने वाली थीं। हिंद-प्रशांत क्षेत्र में नियम-आधारित व्यवस्था और अंतरराष्ट्रीय नियमों का लिहाज करने, संपर्क बढ़ाने और बेरोक-टोक नौवहन के आग्रह से जाहिर है कि दक्षिण चीन सागर के विवाद के मद्देनजर क्वाड ने चीन के रुख को अमान्य किया है। दक्षिण चीन सागर के लगभग पूरे हिस्से पर चीन दावा करता है जबकि विएतनाम, फिलीपीन्स, मलेशिया और ब्रूनेई इसका विरोध करते आ रहे हैं। भारत, जापान और अमेरिका भी इस मामले में चीन के रुख पर कई बार नाराजगी जता चुके हैं। क्या क्वाड के गठन को इस विवाद की पृष्ठभूमि से अलग करके देखा जा सकता है?

THE HINDU

Date: 14-11-17

On maternity benefits

It is time for the government to shoulder the financial responsibility

Deepika Kinhal, is a practicing advocate based in Bengaluru and a Senior Resident Fellow at Vidhi Centre for Legal Policy

The amendments to the Maternity Benefit Act, which were introduced this year, in particular the provision of 26 weeks of paid maternity leave and the mandatory crèche facility, are path-breaking, but there are concerns over their feasibility. Recently, the Labour Ministry placed the financial burden of implementing these measures squarely on the employers; this legitimises these concerns.

The amendments seek to improve infant mortality rate (34 per 1,000 live births) and maternal mortality rate (167 per 100,000 live births), but the challenge lies in their implementation. The measures introduced, particularly the crèche facility, are cost-intensive and may deter employers from hiring or retaining pregnant women. A 2014 International Labour Organisation report specifically cautions against making employers solely liable for the cost of maternity benefits for this reason. It advocates that maternity benefits should be provided either through compulsory social insurance or public funds. In fact, the Standing Committee on Labour in 2007 had suggested that the government should create a corpus fund to partially sponsor the costs to be incurred by the employer to provide maternity benefits. However, no government has shown the will to change this status quo even though the state and society have much to gain from ensuring effective implementation of maternity benefits.

To illustrate, one of the key goals of any maternity benefit policy is to facilitate breastfeeding by working mothers. Studies have shown that health benefits that accrue to both the mother and her child by breastfeeding are more than matched by economic returns at family, enterprise and national levels. A 2017 report released by the Global Breastfeeding Collective, led by UNICEF and the World Health Organisation, has termed breastfeeding the "best investment in global health" generating $35 in global return for every dollar invested. A 'Global Breastfeeding Scorecard, 2017' released by the Collective shows that India spends an abysmal $0.15 (less than ₹10) per child to ensure that it meets the breastfeeding guidelines. The report suggests that as things stand, India is poised to lose an estimated $14 billion in its economy, or 0.70% of its Gross National Income, due to a high level of child mortality and growing number of deaths in women from cancers and Type II diabetes, directly attributable to inadequate breastfeeding.

It is time for the government to shoulder the financial responsibility of providing maternity benefits. This could be implemented by enabling employers to seek reimbursement of the expenses incurred by them in this respect. In addition, the government must find innovative and cost-effective ways to ensure that working women are not forced to discontinue breastfeeding. A simple method is to express breast milk and store it to be given to their children while they are away. The only provision that needs to be provided by employers to facilitate this would be a clean and private pumping room.

Date: 14-11-17

Eastern promise

India must balance diverse alliances as it strengthens its East Asia pivot

EDITORIAL

Prime Minister Narendra Modi's visit to the Philippines to attend the ASEAN-India summit, the East Asia Summit and the Regional Comprehensive Economic Partnership summit has put India centre-stage in the Asian region now referred to as "Indo-Pacific". Equally, it puts the "Indo-Pacific" and ties with the U.S. centre-stage in India's Act East policy, in all three spheres: political, strategic and economic. Mr. Modi's arrival in Manila was preceded by the first meeting of the India-U.S.-Japan-Australia quadrilateral, a grouping first mooted in 2006 by Japanese Prime Minister Shinzo Abe. It ended with statements on cooperation for a "free, open, prosperous and inclusive Indo-Pacific region", a direct signal that it will counter China's actions in the South China Sea if necessary. Next, Mr. Modi's meeting with U.S. President Donald Trump saw a similar emphasis on cooperating in the Indo-Pacific, a term now widely adopted by the U.S. The 'Quad' doesn't just pertain to maritime surveillance, it also aims at enhancing connectivity in accordance with "the rule of law" and "prudent financing" in the Indo-Pacific together, a reference to American plans to build an "alternative financing model" to China's Belt and Road Initiative. Finally, Mr. Modi's speech to ASEAN vowed to bring India's economic and business ties with the region up to the level of their "exceptionally good political and people-to-people relations". This sets the stage for closer engagement ahead of the 25th year Commemorative Summit to be held in Delhi in January 2018, with ASEAN leaders also expected to attend Republic Day festivities.

The clarity in India's purpose in East Asia at this juncture is important, but the next steps are equally vital. To begin with, despite a government statement to the contrary, it is impossible to avoid the conclusion that the Quad, also called a "coalition of democracies" of the Indo-Pacific, is a front aimed at countering China's influence. As the only member of the proposed coalition that is also part of another security arrangement involving China and Russia, the Shanghai Cooperation Organisation, India's ability to balance its interests will be tested. Finally, while there will be much to navigate on the political front, Mr. Modi would be keen to keep a sharp focus on the economic tailwinds during his engagements in Manila. The 10 ASEAN countries account for about 11% of India's global trade. For the past few years India has joined the ASEAN "plus six", including China, Japan, South Korea, Australia and New Zealand, to discuss the RCEP free trade agreement. Talks have often run into rough weather over India's stand on visas and services access, while also holding out against free trade that could give China an unfair edge in goods trade. Mr. Modi's work is cut out as he clarifies India's pivot in east Asia.